**ओ३म्**

**“मृतकों के चित्रों पर पुष्पमाला व पुष्प चढ़ाना अवैदिक कृत्य”**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 एक आर्य विद्वान ने हमारा ध्यान आर्यजनों द्वारा अपने प्रिय परिवारजनों की मृत्यु आदि के बाद आयोजित श्रद्धांजलि आदि कार्यक्रमों में उनका चित्र रखने, उस पर पुष्पमाला डालने व पुष्प चढ़ाने की अवैदिक परम्परा की ओर आकर्षित किया है। उन्होंने हमसे हमारा पक्ष पूछा था जो हमने उन्हें अवगत करा दिया है और इसी लिये इस विषय की चर्चा कर रहे हैं।

इस विषय में हमें पूरी स्थिति पर ध्यान देना होगा। हमारा उद्देश्य पूर्व व भावी किसी आर्यजन की भावनाओं को ठेस पहुंचाना कदापि नहीं है। हम जो करें उससे पूर्व हम सिद्धान्त के विषय में चिन्तन कर लें। प्रमाणों को पता कर लें या स्वयं देख लें। यदि हमें लगता है कि यह वेद और ऋषि मान्यताओं के अनुकूल है, तो फिर वह अवश्य करणीय होगा और यदि हमारी आत्मा ही हमें उस कार्य को अवैदिक बताये तो ऐसी स्थिति में उसका करना करणीय नहीं हो सकता। इसका प्रभाव यह होता है कि ऐसे आयोजन में जो सिद्धान्त को जानने व समझने वाले आर्यजन होते हैं उनकी आत्मा व मनों में इसको लेकर विचार व मंथन उत्पन्न होता है। अधिकांश सोचते तो हैं कि यह सिद्धान्तों के विपरीत है परन्तु वह कहते किसी को कुछ नहीं है, उसे चलने देते हैं। हमें व्यक्तिरूप से लगता है कि यह अवसर भी किसी को रोकने व टोकने का नहीं होता क्योंकि परिवारजन गहरे आत्मीय भावों से भरे हुए होते हैं व ऐसे समय पर उनका विवेक लगता है कि साथ न दे।

 इस विषय पर विचार करने के लिए हमें यह समझना है कि हमारे परिवार के दिवंगत मनुष्य की जो कीमत व महत्व था, उसके अर्थात् उसकी आत्मा के, अपने शरीर में विद्यमान होने के कारण से ही था। आत्मा थी तो उसे नये वस्त्र प्रदान करने और रोगी होने पर सस्ती व खर्चीली सभी प्रकार की चिकित्सा आदि कराते थे। अनेक वस्तुयें उन्हें भेंट की जाती थीं। वह उन्हें स्वीकार करते थे और धन्यवाद करने के साथ उनका निजी जीवन में उपयोग भी करते थे। आत्मा के शरीर से पृथक हो जाने को ही हम मृत्यु मानते हैं। उसके बाद उस दिवंगत आत्मा के शरीर का एक ही मूल्य होता है कि वेद विहित विधि-विधान से उसकी अन्त्येष्टि कर देना। सभी आर्यजन ऐसा ही करते हैं और संस्कारविधि में दिये गये विधान से अन्त्येष्टि कर देते हैं। स्वामी दयानन्द जी महाराज ने संस्कारविधि में स्पष्ट कहा है कि अन्त्येष्टि सम्पन्न हो जाने के बाद दिवंगत आत्मा के लिए परिवारजनों द्वारा किसी अन्य कृत्य, दशमी, तेरहवी व बरसी, चौथा, उठाला आदि करने की आवश्यकता नहीं है। वह लिखते हैं कि तीसरे दिन श्मशान भूमि में जाकर शवदाह के स्थान से अस्थियों को चुन कर उसे वहीं किसी स्थान पर रख आना चाहिये।

कुछ लोग अस्थियों को हरिद्वार व किसी अन्य नदी में ले जाकर प्रवाहित करते हैं, वह भी हमें पौराणिक वा अन्ध श्रद्धा से युक्त कर्म व कार्य लगता है। अस्थियों व राख को किसी वन व उद्यान में ले जाकर उसे किसी नये पौंधे के नीचे डालकर उस वृक्ष के पौधे को लगाना भी हमें वैदिक सिद्धान्तों की दृष्टि से उचित प्रतीत नहीं होता। इसके पीछे जो भावना है वह सिद्धान्त की दृष्टि से उचित नहीं। यह भी एक प्रकार की अवैदिक परम्परा ही है। उससे न तो मृतक को और न उनके पारिवारिकजनों को कोई लाभ होता है। शव की राख व अस्थियों को किसी नदी में प्रवाहित करने से तो जल प्रदुषण ही होता है। लोग कई बार नदियों के जल को भरकर घर ले आते हैं, यदा कदा किसी पौराणिक कृत्य करते हुए उसका आचमन करते हैं वा उसे पीते भी हैं। ऐसा जल पीना हमें किसी भी प्रकार से उचित प्रतीत नहीं होता। यह भी हमारी व पीने वालों की अन्ध श्रद्धा ही होती है। यह बात अलग है कि किसी एक व कुछ नदियों के जलों को लम्बी अवधि पर रखने पर वह प्रदुषित व कीटाणुओं से युक्त न होता हो परन्तु यदि उसमें मृतक की राख व अन्य अशुद्धियां मिली हैं तो वह आचमन करने योग्य तो कदापि नहीं होता, ऐसा हम अनुभव करते हैं।

 हम सभी जानते हैं कि मरने के बाद जीवात्मा का कुछ समय बाद उसके प्रारब्ध व कर्मानुसार पुनर्जन्म हो जाता है। मरने के बाद क्योंकि शरीर छूट गया होता है, इसलिए हम अनुभव करते हैं कि जीवात्मा को किसी भी प्रकार के सुख, दुख व पारिवारिक जनों की भावनाओं की किसी प्रकार से भी अनुभूति नहीं होती। पुनर्जन्म के सिद्धान्त से ही मृतक श्राद्ध का भी स्वतः खण्डन हो जाता है। जब मृतक का शरीर अन्त्येष्टि करके जला दिया गया और उसका कुछ ही काल बाद पुनर्जन्म वा गर्भवास हो जाता है, फिर उसके लिए श्राद्ध के नाम पर ब्राह्मणों व किसी अन्य को भोजन कराना उचित नहीं होता। यह अन्धविश्वास मात्र होता है। हां, यदि मृतकों के परिवार जन चाहें तो वर्ष में एक वा अनेक बार उनकी स्मृति व अकारण ही गरीबों को एकत्रित कर उन्हें भोजन करा सकते हैं और उनकी आवश्यकता की वस्तुओं की जानकारी लेकर उन्हें प्रदान कर सकते हैं। उन निर्धनों व उनके बच्चों को पढ़ा भी सकते हैं। यदि ऐसा करेंगे तो यह अधिक उपयुक्त एवं शुभ परिणामकारी हो सकता है।

 उपर्युक्त विवेचन से यह ज्ञात होता है कि मृतक जीवात्मा की स्मृति में कार्यक्रम आयोजित कर उसके चित्र पर फूलमाला एवं फूल चढ़ाने की न तो आवश्यकता है न इससे किसी प्रकार का लाभ होता है। यह अवैदिक व अवैज्ञानिक परम्परा है। कुछ लोग चित्र पर फूल चढ़ा कर वहां चित्र के सामने हाथ जोड़ कर खड़े भी रहते हैं। यह भी घोर अवैदिक एवं अज्ञानपूर्वक कृत्य है। आर्यों को चाहिये कि वह अपने परिवार में किसी वियोग के अवसर पर इस प्रक्रिया को न होने दें व इसका स्वरूप बदले दे। इसका समाधान यह हो सकता है कि बड़ा सा चित्र बनवा या छपवा कर उसे पीछे लगाया वा टांगा जा सकता है जहां तक कोई आगन्तुक बन्धु न पहुंच सके। आरम्भ, मध्य व अन्त में पुरोहित से से इस विषय की संक्षिप्त चर्चा भी कराई जा सकती है। श्रद्धांजलि सभा, पगड़ी व उठाला आदि की रस्म में चित्र रखा तो जा सकता है परन्तु उस पर पुष्पमाला व पुष्प चढ़ाना हमें वैदिक सत्य परम्पराओं की दृष्टि से उचित प्रतीत नहीं होता। अतः इसे आर्यजनों को, यदि कहीं ऐसा होता हो, तो यथाशीघ्र बन्द कर देना चाहिये।

 हम यह जानते हैं कि ऐसे समय पर मनुष्य दिवंगत के प्रति अपनी गहरी आत्मीय भावनाओं से भरा हुआ होता है। उस समय उसे कुछ कहना व बताना उचित नहीं होता है। कहेंगे तो उसे अधिक दुःख हो सकता है और परिणाम अच्छे नहीं होगें। अतः अन्य अवसरों पर आर्यजनों को इसकी परस्पर व सत्संग आदि में भी चर्चा कर लेनी चाहिये जिससे हमें अपने वैदिक कर्तव्यों का ज्ञान रहे और हम व हमारे बड़े ऐसे कृत्यों को परिवारों में न होने दें। हमने अपने विचारों को यहां स्पष्ट किया गया है क्योंकि हम से अपनी स्थिति स्पष्ट करने के लिए कहा गया था। यदि इससे किसी को लाभ होता है तो अच्छी बात है। यदि कोई हमारी बात व भावना को समझ न पाये और उसे दुःख पहुंचता हो तो हम उसके प्रति सहानुभूति रखते हुए उसका धन्यवाद ही करेंगे। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**

**ओ३म्**

**“मृतकों का श्राद्ध अशास्त्रीय एवं वेद विरुद्ध होने से त्याज्य कर्म”**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

आश्विन मास का कृष्ण पक्ष मृत पितरों का श्राद्ध कर्म करने के लिए प्रसिद्ध सा हो गया है। इन दिनों पौराणिक नाना प्रकार के नियमों का पालन करते हैं। अनेक पुरुष दाढ़ी नहीं काटते, बाल नहीं कटाते, नये कपड़े नहीं खरीदते व सिलाते, यहां तक की विवाह आदि का कोई भी शुभ कार्य नहीं करते हैं। कहा जाता है कि इन दिनों मृतक माता-पिता, दादी-दादा और परदादी-परदादा अपने अपने परिवारों में भोजन के लिए आते हैं और भोजन करके सन्तुष्ट होते हैं। आज के वैज्ञानिक युग में यह देखकर आश्चर्य होता है कि लोग मध्यकालीन इस मिथ्या परम्परा को बिना सोचे विचारे मानते व पालन करते आ रहे हैं। ऋषि दयानन्द (1825-1883) ने मृतक श्राद्ध का युक्ति व तर्क सहित शास्त्र प्रमाणों से खण्डन किया था। यह बता दें कि 18 पुराणों की शास्त्रों में गणना नहीं होती। पुराणों की असलियत जानने के लिए **‘पौराणिक पोल प्रकाश’** ग्रन्थ का अध्ययन करना चाहिये जो आर्य विद्वान पं. मनसाराम वैदिक-तोप द्वारा रचित है। पं. मनसाराम जी वैश्य परिवार में जन्म लेकर भी वेदों व शास्त्रों के मर्मज्ञ थे। महर्षि दयानन्द ने मृतक श्राद्ध के विरुद्ध अनेक शास्त्रीय विधान भी दिये थे जिससे यह सिद्ध होता था कि श्राद्ध मृत पितरों का नहीं अपितु जीवित माता-पिता, दादी-दादा व अन्य वृद्धों का किया जाना चाहिये। मृतक का तो दाह संस्कार कर देने से उसका शरीर नष्ट हो जाता है। उस मृतक का उसके कुछ समय बाद ही पुनर्जन्म हो जाता है। वह अपने कर्मानुसार मनुष्य या पशु-पक्षी आदि अनेक योनियों में से किसी एक में जन्म ले लेता है व यही क्रम चलता रहता है। आरम्भ में वह बच्चा होता है और समय के साथ उसमें किशोरावस्था, युवावस्था, वृद्धावस्था आती है और उसके बाद उसकी पुनः मृत्यु होकर पुनर्जन्म होता है। अतः हो सकता है कि वर्तमान में वह किसी अन्य प्राणी योनि में वह जीवन निर्वाह कर रहा होगा। जिस प्रकार हम अपने पूर्व जन्मों के परिवारों में श्राद्ध पक्ष में नहीं जा सकते, उसी प्रकार हमारे मृत पितर भी हमारे यहां भोजन करने नहीं आ सकते। यह भी असम्भव है, धार्मिक व वैज्ञानिक दोनों दृष्टियों से, की जन्मना ब्राह्मण का खाया हुआ हमारे पितरों को प्राप्त हो जाये। अतः किसी के भी द्वारा अपने मृत पितरों का श्राद्ध करना अनुचित व अवैदिक कार्य होने से अधार्मिक कृत्य ही है जिसका कोई तर्क, युक्ति व वैज्ञानिक आधार नहीं है। यह असत्य व अविवेकपूर्ण है एवं अन्धविश्वास से युक्त कृत्य है।

 वेद एवं ऋषियों के ग्रन्थ पढ़ने पर यह तथ्य सामने आता है कि शास्त्रों में जहां जहां श्राद्ध का वर्णन हुआ है वह जीवित पितरों का श्राद्ध करने के लिए ही हुआ है। भोजन कौन खा सकता है?, वस्त्र कौन धारण कर सकता है? आशीर्वाद कौन दे सकता है? यह सब कार्य जीवित पितर ही कर सकते हैं। यदि यह सब कार्य हम पण्डितों व पुजारियों को सामान देकर करेंगे तो इसका लाभ पितरों को न होकर उन पण्डित-पुजारियों को ही होगा। आश्चर्य इस बात का है कि आज के वैज्ञानिक युग में भी लोग इन मध्ययुगीन अन्धविश्वासपूर्ण बातों पर विश्वास करते हैं और हमारे पण्डे-पुजारी लोगों की धार्मिक भावना व उनके भोलेपन व सज्जनता का गलत लाभ उठाते हैं।

 हम सभी सनातनी व पौराणिक भाईयों को यह निवेदन करना चाहते हैं कि महर्षि दयानन्द व आर्यसमाज की कृपा से हमारे वेद आदि सभी शास्त्र हिन्दी अनुवाद सहित उपलब्ध है जिसे पांचवी कक्षा पास व्यक्ति भी आसानी से पढ़ व समझ सकता है। अब स्वामी दयानन्द जी कृपा से वेदों पर ब्राह्मण वर्ग का एकाधिकार नहीं रहा अपितु यह मानवमात्र को मिल चुका है। अनेक दलित भाई व बहिन भी आर्यसमाज के गुरूकुलों में पढ़ते हैं और वेदों के अच्छे विद्वान है। यह अतिरंजित बात नहीं अपितु तथ्यपूर्ण है कि हमारे आर्यसमाज के अनेक दलित परिवारों में जन्में स्त्री व पुरूष ब्राह्मणों के शास्त्रीय गुणों कर्म व स्वभाव से पूर्ण हैं और वेदों पर अधिकारपूर्वक प्रवचन करने के साथ यज्ञ व महायज्ञ भी सम्पन्न करते व कराते हैं।

 हमारा यह लेख लिखने का यही तात्पर्य है कि हिन्दुओं को अपनी मध्ययुगीन निद्रा का त्याग कर देना चाहिये। वेद व अन्य शास्त्रों के हिन्दी अनुवादों को स्वयं पढ़ना चाहिये और अपने विवेक से सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग करना चाहिये। क्रान्तिकारी धार्मिक सामाजिक ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश को पढ़कर भी सत्य व असत्य का विवेक कर सकते हैं। आप पायेंगे कि मृतक श्राद्ध एक शास्त्रीय कृत्य वा कर्तव्य नहीं अपितु मिथ्या विश्वास है जिसके करने से किसी लाभ की प्राप्ति होना सम्भव नहीं है अपितु प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष अनेक प्रकार की हानि हो सकती है क्योंकि अज्ञानता से किया गया कार्य अधिकांशतः हानि ही पहुंचाता है। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**

**ओ३म्**

**-वैदिक साधन आश्रम तपोवन देहरादून के शरदुत्सव का प्रथम दिन-**

**“संसार का सबसे बड़ा आश्चर्य परमेश्वर व उसकी**

**रचनायें हैः आचार्या प्रियम्वदा वेदभारती”**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून का शरदुत्सव आज सोल्लास आरम्भ हो गया। साधको को प्रातः 5.00 बजे से 6.00 बजे तक योग साधना कराई गई। प्रातः 6.30 बजे सन्ध्या हुई और इसके बाद ऋग्वेद के मन्त्रों से यज्ञ आरम्भ हुआ। मंच पर यज्ञ की ब्रह्मा विदुषी आचार्य डा. प्रियम्वदा वेदभारती, मंत्रोच्चार हेतु उनके गुरुकुल की पांच ब्रह्मचारिणियां सहित स्वामी दिव्यानन्द सरस्वती, आर्यसमाज के सुप्रसिद्ध गीतकार एवं गायक पं. सत्यपाल पथिक जी, पं. सूरत राम शर्मा आदि उपस्थित थे। मंच के पास व साथ ही पं. शैलेन्द्र मुनि सत्यार्थी, श्री सुशील भाटिया जी, आश्रम के मंत्री श्री प्रेम प्रकाश शर्मा जी और भजनोपदेशक श्री रूहेल सिंह जी विराजमान थे। ऋग्वेद के मन्त्रों का पाठ करते हुए उसकी समाप्ती पर आचार्या जी अपने कुछ विचार भी प्रस्तुत करती थी। उन्होंने कहा कि ईश्वर ही संसार में उपासना के लिए चुनने योग्य है। उन्होंने याज्ञिकों एवं साधकां को कहा कि यज्ञ करते हुए अहकार मत करना। यज्ञ में आहुतियां देने से ब्रह्माण्ड और सुन्दर हो जायेगा। ऐसा करने पर ही मनुष्य व आप ईश्वर के श्रेष्ठ पुत्र कहलाओगे। आचार्या जी ने कहा कि जो यज्ञ की भावना को अपने अंग अंग में समा लेते हैं वह पाप वा बुरे कामों में प्रवृत्त नहीं होते। आप सब लोग यज्ञ कर्म में अवश्य ही प्रवृत्त रहें। हमारी सन्तानें भी यज्ञ कर्म को करने वाली हों। एक सूक्त के अन्त में आचार्या जी ने कहा कि संसार में सबसे बड़ा आश्चर्य परमेश्वर व उसकी रचनायें हैं। आश्चर्य यह है कि कैसे उस परमेश्वर ने रचना की? विचित्र विचित्र रचनायें करने के कारण ही वेदों में उसे **‘चित्र’** कहा गया है। ईश्वर महान है। वैज्ञानिक भी उसे जानने में हार जातें हैं। हम पर सदा शासन करने के कारण परमेश्वर हमारा राजा है। उसकी सभी देने हमारे लिए विशेष हैं। उन्होंने कहा कि अमरूद के एक पेड़ से हजारों अमरूद के पेड़ उत्पन्न कर सकते हैं। परमात्मा को उन्होंने अनन्त दानी बताया। बादल के जल के समान परमात्मा अपना दान सभी पर बरसा रहे हैं।

 विदुषी आचार्या प्रियम्वदा वेदभारती जी ने कहा कि ईश्वर के ज्ञान की अनन्तता है हमारी यह सृष्टि। हमें सब कुछ देने वाला वह परमात्मा ही है। परमात्मा अद्भुद है। हम चाहें भी तो उसके शासन से बाहर नहीं जा सकते। इसका उदाहरण देते हुए स्वामी दयानन्द जी के साथ उदयपुर में घटी घटना को आपने प्रस्तुत किया जिसमें राजा द्वारा प्रलोभन देने पर स्वामी दयानन्द जी ने उसे कहा था कि तुम्हारा राज तो सीमित है, एक दौड़ लगाऊंगा तो उससे बाहर चला जाऊंगा, परन्तु ईश्वर की अवज्ञा करके मैं उससे बाहर कैसे जा सकूंगा। यज्ञ की समाप्ती पर यज्ञ की प्रार्थना की गई जिसे आर्य भजनोपदेशक श्री पथिक जी ने हारमोनियम के साथ गाकर प्रस्तुत किया। इससे पूर्व यज्ञ में उपस्थित दो व्यक्तियों के जन्मदिवस होने के कारण विशेष आहुतियां भी दी गईं। यज्ञ प्रार्थना के बाद पथिक जी ने स्वलिखित भजन प्रस्तुत किया। भजन के बोल थे ‘श्रेष्ठ धन देना ओ दाता श्रेष्ठ धन देना। जिसमें चिन्तन और मनन हो ऐसा मन देना।। बल बुद्धि उत्साह बढावें वेद ज्ञान को पाकर। कर्म करें कर्तव्य समझ कर फल की चाह मिटाकर।। अति उज्जवल अति पावन प्रेरक चाल चलन देना। ओ दाता श्रेष्ठ धन देना।।’

 भजन के बाद आचार्या प्रियम्वदा वेदभारती जी का श्राद्ध पर प्रवचन हुआ। उन्होंने कहा कि हमारे सनातनी भाई मानते हैं कि श्राद्ध व पितर रक्ष में मृतक पितर अपने परिवारों में आते हैं और भोजन खाकर उनको आशीर्वाद देकर लौट जाते हैं। विदुषी आचार्या ने कहा कि यदि हम सनातनी पण्डितों की बातों पर विश्वास करेंगे तो उनके तो घर भर जायेंगे परन्तु हमारा धन हमारे पितरों के पास कदापि नहीं पहुंचेगा। उन्होंने कहा कि पौराणिकों के मृतक पितरों से सम्बन्धित कथन अव्यवहारिक एवं अविवेकपूर्ण हैं। उन्होंने दर्श मास में प्राचीन समय में यह प्रार्थना प्रसिद्ध थी कि गृहस्थी जन अपने पितरों का ध्यान रखें और उनकी सेवा प्रतिदिन करें। उन्होंने कहा कि पितरों की सेवा वर्ष भर करनी है अन्यथा पितर दुःखी होंगे। आचार्या जी ने कहा कि आशीर्वाद तो जीवित माता पिता अपनी सन्तानों द्वारा सेवा करने पर देते हैं। उन्होंने कहा कि वर्षा ऋतु में काम शिथिल हो जाता है। पुराने समय से वर्षाऋतु में चौमासे में पितर व विद्वदजन वनों में स्थित आश्रमों से नगरों के पास आ जाते थे और वहां ग्रामीण नागरिकों को वेदोपदेश देते थे। आश्विन मास के कृष्ण पक्ष की अमावस्या को उनको अन्तिम विदाई दी जाती थी। वह पुनः नगरों व ग्रामों से वनों में स्थित अपने आश्रमों में लौट जाते थे। अमावस्या पर उनका विसर्जन कर देते थे और वह हमारी सेवा से सन्तुष्ट होकर हमें आशीर्वाद देकर अपने आश्रमों में लौट जाते थे।

स्वास्थ्य की चर्चा कर विदुषी आचार्या जी ने कहा कि श्रावण व भाद्रपद मासों में दही व उससे निर्मित पदार्थों का किसी भी रूप में सेवन नहीं करना चाहिये। इन मासों में वायु प्रकुपित होती है। इसका सेवन से रोग का भय होता है। आचार्या जी ने यज्ञ प्रेमी साधकों को ऋतु के अनुकूल भोजन करने की सलाह दी। उन्होंने कहा कि श्रावण और भाद्रपद मास में रात्रि समय में कम मात्रा में खिचड़ी आदि का सेवन करना चाहिये। अन्य भारी पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिये। उन्होंने कहा कि ऐसा कहा गया है कि भाद्रपद मास में रात्रि समय में केवल दूध ही लेना चाहिये। ऐसा करने से आपका स्वास्थ्य उत्तम होगा। उन्होंने कहा कि आश्विन महीने में 15 दिन खीर व माल पूवे बनावें और खावें इससे हानि नहीं होती। इससे आपका स्वास्थ्य उन्नत होगा। उन्होंने कहा कि खीर में नारीयल को घिसकर अवश्य डालना चाहिये। इससे अधिक लाभ होगा। उन्होंने दोहराया कि प्राचीन समय में आश्विन मास की अमावस्या को जीवित पितरों की विदाई हुआ करती थी। भाद्रपद के अन्तिम पक्ष के 15 दिन ऐसा भोजन करें कि वायु शान्त हो जाये और आप स्वस्थ रहें। उन्होंने कहा कि मृतक श्राद्ध करने वाले भी केवल तीन पीढ़ियों का ही श्राद्ध करते हैं। इसका कारण है कि तीन से अधिक पीढ़ियां जीवित ही नहीं रहती। इससे भी सिद्ध होता है कि श्राद्ध जीवित पितरों का ही किया जाता है। इसके बाद यजमानों को आशीर्वाद देने की प्रक्रिया सम्पन्न हुई। इसके बाद ध्वजारोहण हुआ जिसमें आश्रम में पधारे सभी साधक व विद्वान सम्मिलित हुए। पूर्वान्ह 10.00 बजे यज्ञशाला में गायत्री यज्ञ हुआ और सत्संग भवन में अन्य लोगों ने भजन व प्रवचनों का आनन्द लिया। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**